Shodh Prabha: A Multidisciplinary Journal
ISSN: 3108-2726 (Online), 3108-2890 (Print), Volume-2, Issue-1, (Jan - Feb) 2026

संत मलूकदास के काव्य में मानवीय संवेदना

डॉ. मुन्ना साह
सहायक प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, मिल्लत महाविद्यालय, दरभंगा, बिहार
ई-मेल: munnasahlnmu@gmail.com

शोध सार:

मनुष्य जिन आंतरिक भावनाओं एवं अनुभूतियों के मध्यम से दूसरे के सुख-दुःख, पीड़ा, करुणा तथा आनंद को अनुभव करता है, उसे संवेदना कहते हैं। करुणा, सहानुभूति, प्रेम, सामाजिक उत्तरदायित्व आदि संवेदना के आवश्यक तत्व हैं। निर्गुण भक्ति परंपरा के संत कवियों में संत मलूकदास का प्रमुख स्थान है। उनकी रचनाओं में मानवीय संवेदना, करुणा, दया, समता, सांसारिक मोह से विरक्ति और लोकमंगल की भावना का स्वर स्पष्टता के साथ अभिव्यक्त हुआ है। उन्होंने माया को मानव उन्नति में बाधक एवं पतन का मूल कारण माना है तथा आध्यात्मिक चेतना के माध्यम से मानव जीवन को श्रेष्ठ बनाने का मार्ग प्रशस्त किया है। वे मानते हैं कि माया के बंधन से मुक्त होने के लिए गुरु की शरण में जाना आवश्यक है। मलूकदास ने नैतिकता, प्रेम और सदाचार को मानवता के लिए अनिवार्य बताया है तथा उनकी वाणी में समस्त मानव-कल्याण की भावना निहित है।

शब्द संकेत: संवेदना, मानवीयता, विवेकपूर्ण, नवीन सृष्टि, एकात्मकता, सहानुभूति।

मूल आलेख:

मनुष्य सभी प्राणियों में विवकेशील प्राणी है, इसलिए उसके द्वारा किया गया कर्म विवेकपूर्ण होता है। इस कर्म-साधना के कारण मानव में नवीन सृष्टि की रचना करने की शक्ति निहित है। उसके संघर्षों के कारण ही सभ्यता का विकास हुआ एवं नवीन संस्कृति उत्पन्न हुई। इन्हीं उपलब्धियों के कारण सभी प्राणियों में मानव को उच्च स्थान प्राप्त है। संतों की दुनिया सहज, सरल, चैतन्य और प्रकाशमय होती है। ढोंग, दिखावा, छल, छद्म और फरेब की दुनिया के विपरीत दुनिया। संतों ने मानवीय, संवेदनशील दुनिया के निर्माण में अपनी संपूर्ण सामर्थ्य का समावेश कर दिया तथा अपनी वाणी को परिष्कृत किया। कबीर, रैदास, नानक, दादू की भाँति संत मलूकदास भी आजीवन मानवीयता, अध्यात्म, हिन्दू-मुस्लिम एकात्मकता एवं जाति-पाति के विरूद्ध संदेश देते रहे। वे अपनी वाणी में दीन, दुःखी, दरिद्र, भूखे-प्यासे की सहायता को ही सच्ची भक्ति और धर्म मानते हैं तथा उनको सुखी बनाना ही मुक्ति समझते हैं-

"जो भूखे को अन्न खवावै। सो सिताब (शीघ्र) साहेब को पावै।।

अपना-सा दुःख सब का मानै। दास मलूका सबको मानै।।"[1]

इन पंक्तियों से स्पष्ट होता है कि मलूकदास के कथन और कार्य में समानता विद्यमान है। उनके मंदिर, आश्रम या चौरा पर आज भी प्रत्येक दिन प्रसाद मिलता है। जिसमें मिठाई, फल और भक्तजन द्वारा अर्पित किया गया सात्विक भोजन शामिल होता है। मलूकदास की रचनाओं में निर्धनों, उत्पीड़ितों के लिए जिस प्रकार की पीड़ा दृष्टिगत होती है, वैसी अन्यत्र दिखाई नहीं देती है। मलूकदास ने उन लोगों को महान माना है जिनके हृदय में दया, धर्म विद्यमान है-

"दया धरम हिरदै बसै, बोले अमृत बैन।

तेइ ऊँचे जानिये, जिनके नीचे नैन।।"[2]

पेड़-पौधों में जीवन की सच्चाई को लेकर मलूकदास ने बड़े ही मुखर शब्दों में कहा है कि वृक्षों को अपने समान समझकर उनके हरे डाल को नहीं तोड़ना चाहिए। क्योंकि पेंड़-पौधों में भी मनुष्य की भाँति ही जीवन होता है-

"हरी डार मत तोड़िये लागै छूरा बान।

दास मलूका यों कहे अपना-सा जिव जान।।"[3]

मलूकदास समाज को सही मार्ग दिखाना चाहते हैं जिससे एक समतामय, आत्मीय, संवेदनशील समाज का निर्माण हो सके। भक्ति के मूल आधार पर मलूकदास ने भ्रम या भटकाव की कोई संभावना नहीं रखी। आज विभिन्न संप्रदायों के मुल्ला-पंडित, पादरी, ज्ञानी जो मानव समाज को धर्म-सम्प्रदाय के नाम पर पीड़ाएँ दे रहे हैं, उनके लिए मलूकदास की रचनाएँ सही मार्ग प्रशस्त करती नजर आती हैं-

"मलूका सोई पीर है, जो जाने पर पीर।

जो पर-पीर न जानही, सो क़ाफ़िर बे-पीर।।"[4]

कबीर, दादू नानक आदि सन्त कवियों के स्तर से मलूकदास को ऊपर उठा देने वाला उनका मुख्य गुण सेवाभाव था। सेवा का यही भाव उनमें आजीवन बढ़ता रहा और इस गुण के कारण ही वे सभी सन्तों में श्रेष्ठता के भागी हैं। मलूकदास सदैव परोपकार का कार्य करते रहे। खराब मार्ग होने के कारण उस मार्ग से आने-जाने वाले लोगों को कष्ट मिलता देख, वे स्वयं अपने धन से उस मार्ग को सही कराते थे, ताकि लोगों को कष्ट नहीं हो। इस प्रकार वे परोपकार के लिए अपने धन को सहज ही खर्च करने में आनंदित होते थे। वे लिखते हैं कि -

"पर कारज में बड़े समर्था, हर सो लेय चाहे न अरथा।

मारग जहाँ लोग दुख पावै, लाभ मंजूर आप बंधवावै।।"[5]

अन्य संत कवियों की भाँति ही मलूकदास ने भी अपने काव्य में गुरु की विशिष्टता का गुणगान किया है। इनका मानना है कि गुरु के बिना जीवन माया के बन्धन में रहता है और इसी कारण उसका परब्रह्म से मिलन नहीं हो पाता, ऐसी स्थिति में गुरु के मार्गदर्शन, अनुग्रह एवं कृपा को आवश्यक मानते हुए मलूकदास कहते हैं कि-

"जा हरि के दीदार को, भया दीवान जीव

सतगुरु की दया भइ, सहज मिला सो पीव।।"[6]

साथ ही गुरु की निन्दा करने वालों के लिए वे कहते हैं कि दान और तीर्थयात्रा करने वाला भी यदि गुरु की निन्दा करता है, तो उसे नर्क की प्राप्ति होती है।

"दान जग्य तीरथ वह करै, गुरु को निन्दक नरक में परै।।"[7]

आज मनुष्य ने हिंसा का मार्ग चुना लिया है, वह एक-दूसरे के जीवन को परस्पर पीड़ाओं से भर दिया है तथा हत्या और हिंसा के रास्ते पर तेजी से बढ़ता जा रहा है। मलूकदास कहते हैं कि इससे और नीची अधमता क्या होगी, पीड़ा सबको एकसमान ही होती है, यह जानकर भी मूर्ख व्यक्ति दूसरे को दुख देता है-

"पीर सभन की एक सी, मूरख जानता नाहिं।"[8]

मलूकदास की वाणी में दया, प्रेम, सद्भावना, करुणा, नाम, जप, भक्ति के विचार सर्वत्र ही मिलेंगे बल्कि वह तो हर जगह अपने राम को ही पाते हैं-

"सब कलियन में बास है, बिना बास नहिं कोय।

अति सुख ता में उपजे जो कोई फूली होय।।"[9]

मानवीयता एवं संवेदनशीलता में मलूकदास का दूर-दूर तक कोई बराबरी नही है। दुःखी, दरिद्र, अभावग्रस्त व्यक्ति को मलूकदास राम का ही रूप मानते हैं। उनके दुःख को दूर करना राम की सच्ची भक्ति है-

"जो दुखिया संसार में, खावों तिनका दुक्ख।

दलिद्दर सौंपि मलूक को, लोगन दीजै सुक्ख।।"[10]

संसार के सभी दुःखों को मलूकदास अपनी झोली में ले लेना चाहते हैं और लोगों में सारे सुख बाँट देना चाहते हैं। ईश्वर की उपासना पर बल देते हुए मलूकदास हिन्दू तथा मुसलमानों से एक स्वर में कहते हैं कि एक ही ईश्वर है, वह सर्वव्यापी तथा सबका निर्माता है, उसकी महिमा का आदि अन्त नहीं है, वही एक ब्रह्म समस्त संसार का पालक है, वह सबके साथ एक सा व्यवहार करता है-

"सर्वव्यापी एक कोहारा, जाक़ी महिमा आर न पारा।

हिन्दू तुरुक का एकै करता, एकै ब्रह्म सबन का भरता।।"[11]

मलूकदास ने अपने दृढ़ स्वर में एक ब्रह्म की सर्वमान्यता का उपदेश दिया और हिन्दू तथा मुलसमानों के हृदय में स्थित महान भेदभाव को समाप्त कर देने का बीड़ा उठाया। मलूकदास की 'भक्ति विवेक' से ज्ञात होता है कि परब्रह्म अविगत, अगम, अगोचर, अलख, निर्गुण तथा निराकार होते हुये भी अवतार लेता है। उन्होंने अपनी रचनाओं में कहीं भी अवतारवाद की आलोचना नहीं की वरन् अपने ग्रंथ सुखसागर में अनेकानेक अवतारों का वर्णन किया है। यहाँ पर यह उल्लेख कर देना आवश्यक है कि सुख सागर में वर्णित अवतार को उस निराकार का अंशमात्र माना है।

"निर्गुण ब्रह्म सगुण होइ आवै, असुर मारि करि भक्ति देखावै।।"[12]

अवतारों की उत्पत्ति निर्गुण ब्रह्म से होती है इसी कारण मलूक निर्गुण ब्रह्म को ही मूल मानते हैं तथा उसी मूल की उपासना करने के लिए बारम्बार उपदेश देते हैं-

"दस अवतार देखि मत भूलो ते सब निर्गुण लाया।

जहां ते आये मिले वहीं मां सागर बूंद समाया।।"[13]

मलूकदास ने परब्रह्म को रहमान, रहीम, करीम, ख़ुदा, हजरत, कादिर, काजी आदि नामों से भी संबोधित किया है। इन नामों का प्रयोग कवि ने हिन्दू एवं मुसलमानों के हृदय में परब्रह्म का एकत्व स्थापित करने के लिए किया है। उन्होंने सर्वत्र अपने साहित्य में मानवमात्र की समानता का संदेश दिया। किसी भी धर्म के मूल गुण दया, परोपकार, सहानुभूति, सत्य, समानता, ब्रह्म का अस्तित्व, प्रेम आदि भावनाएँ मूल रूप से मलूकदास के काव्य में मिलती हैं। उन्होंने अपने उपदेशों से सदैव समाज की कल्याणकारी स्थिति के लिए प्रयास किया है। उन्होंने लोगों को ईश्वरीय चिंतन की ओर उन्मुख किया तथा प्रभावोत्पादक ढंग से सरल, सदाचारपूर्ण, लौकिक जीवन बिताने का संदेश दिया। उन्होंने भक्तिमार्ग में प्रेम को बड़ा महत्त्व दिया है-

"प्रेम परम पद पाइये, प्रेम उतारै पार।

प्रेम भगति की महिमा, श्री मुख कही मुरारी।।"[14]

मलूकदास ने सभी धर्मों के लोगों को यह बताने का प्रयास किया है कि जिस ईश्वर के लिए तुम बड़े-बड़े तीर्थ स्थानों पर जाते हो वह ईश्वर तुम्हारे ही हृदय में विराजमान है। जिसने हरि को अपने हृदय में बसा लिया उसके लिए किसी तीर्थयात्रा की आवश्यकता नहीं है-

"हम जानत तीरथ बड़े, तीरथ हरि की आस।

जिनके हिरदे हरि बसैं, कोटि तीरथ तिन पास।।"[15]

मलूकदास ने अन्य संतो की भाँति माया का अस्तित्व माना है तथा लोगों को चेताया है कि यह काली नागिन के समान है जो समस्त संसार को डस लेती है, इसी ने इन्द्र, ब्रह्मा, नारद तथा व्यास को भी डस लिया है-

"माया काली नागिनी, जिन डसिया सब संसार हो।

इन्द्र डसा ब्रह्मा डसिया, डसिया नारद व्यास हो।।"[16]

भक्तिकाल के निर्गुण संत कवियों की रचनाओं का अवलोकन करने पर 'माया' शब्द की अभिव्यक्ति कबीरदास की वाणी में भी दृष्टिगत होती है। उन्होंने 'माया मुई न मन मुआ' कहते हुए 'माया' को मुक्ति-मार्ग में बाधक माना है। माया के कारण ही मनुष्य जीवन-मरण के चक्र में उलझा रहता है। मलूकदास ने भी कबीरदास की भाँति माया को काली नागिन के समान माना है तथा उसके कोप का भाजन इंद्र, नारद, ब्रह्मा के साथ-साथ समस्त संसार को बताया है।

निष्कर्ष:

संत मलूकदास का सामाजिक सरोकार किसी सम्प्रदाय विशेष में आबद्ध नहीं था बल्कि उनके चित्त में पूरे विश्व-कल्याण की कामना का उद्देश्य निहित था। मलूकदास आजीवन मानवीय गुणों से मंडित रहे तथा समस्त संसार को प्रणय, अहिंसा, दान, दया, प्रेम, भक्ति-भाव, परोपकार आदि का बड़ी शालीनता से उपदेश देते रहे। उन्होंने गुरु, ब्रह्म, साधु आदि की महिमा का वर्णन करके अपनी उदात आस्था तथा अपनी मानवतावादी सामाजिक संवेदना को अभिव्यक्त किया है। यही उनके जीवन और व्यक्तित्व की महिमा एवं गरिमा की पहचान है।

संदर्भ:

1. वंशी, बलदेव, संपादक, संत मलूकदास ग्रंथावली, परमेश्वरी प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण: 2002, पृ. 7
2. उपरोक्त, पृ. 32
3. उपरोक्त, पृ. 8
4. उपरोक्त, पृ. 9
5. दीक्षित, डॉ. त्रिलोकी नारायण, संपादक, संत कवि मलूकदास, संत सूफी साहित्य संस्थान प्रकाशन, संस्करण: 1965, पृ. 16
6. वंशी, बलदेव, संपादक, संत मलूकदास ग्रंथावली, परमेश्वरी प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण: 2002, पृ. 34
7. दीक्षित, डॉ. त्रिलोकी नारायण, संपादक, संत कवि मलूकदास, संत सूफी साहित्य संस्थान प्रकाशन, संस्करण: 1965, पृ. 28
8. वंशी, बलदेव, संत मलूकदास ग्रंथावली, संपादक, परमेश्वरी प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण: 2002, पृ. 36

ISSN: 3108-2726 (Online), 3108-2890 (Print), Volume-2, Issue-1, (Jan - Feb) 2026

9. उपरोक्त, पृ. 10
10. उपरोक्त पृ. 38
11. दीक्षित, डॉ. त्रिलोकी नारायण, संपादक, संत कवि मलूकदास, संत सूफी साहित्य संस्थान प्रकाशन, संस्करण: 1965, पृ. 33
12. उपरोक्त, पृ. 36
13. उपरोक्त, पृ. 37
14. 14. वंशी, बलदेव, संपादक, संत मलूकदास ग्रंथावली, परमेश्वरी प्रकाशन, दिल्ली, संस्करणः 2002, पृ. 34
15. उपरोक्त, पृ. 38
16. रैणा, डॉ. कृष्णा, हिन्दी निर्गुण संत काव्य दर्शन और भक्ति, शारदा प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण: 1977, पृ. 101